



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

समकालीन हिंदी कथा जगत में किन्नर विमर्श की अवधारणा

डॉ.हंसराज चौहान

सह आचार्य – हिन्दी

राजकीय महिला महाविद्यालय, होंद, सीकर (राज.)

समकालीन हिंदी कथा जगत में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श के साथ – साथ आज के दौर का महत्वपूर्ण विमर्श – किन्नर विमर्श का भी प्रमुख स्थान है। भारतीय समाज में मौजूद एक विशेष वर्ग, किन्नर समुदाय का जीवन भी वर्तमान परिदृश्य में हिंदी कथा साहित्य का प्रमुख विमर्श बन रहा है। भारत में किन्नर समुदाय प्राचीन काल से ही अपना जीवन, समाज के अन्य वर्गों के साथ येन-केन प्रकारेण बिता रहा है। इस समुदाय के जीवन की विषमताओं और विसंगतियों की ओर सुसंस्कृत समाज का ध्यान साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत समय तक नहीं गया। यह समुदाय साहित्य की मुख्य धारा में अपनी पहचान दर्ज कराने में असमर्थ रहा। किन्नरों का उल्लेख विविध सदर्यों में भारतीय पौराणिक साहित्य में प्राचीन काल से होता रहा है। रामायण में राम-रावण युद्ध में राम की सैन्य वाहिनी में वानर सेना के साथ कोल, किरात, किन्नर और भील आदि जनजातियों की सेना भी सम्मिलित थी। 'किन्नर' एक वन्य जनजाति के रूप में रामायण महाकाव्य में उल्लिखित है किन्तु यह नपुंसक (हिजड़ा) समुदाय नहीं था। यह बलशाली और वीरता से युक्त जनजाति थी।

महाभारत कथा में अर्जुन देवलोक में उर्वशी के श्राप से नपुंसक रूप धारण करने को अभिशप्त हो जाता है। अर्जुन की इस स्थिति का सदुपयोग पांडव अपने अज्ञातवास काल में करते हैं। पांडव अज्ञातवास काल में विराट महाराज के आश्रय में रहते हैं जहाँ अर्जुन नृत्यकला के आचार्य वृहन्नला (किन्नर) का रूप धारण कर विराट राजा की सुपुत्री 'उत्तरा' को नृत्य कला में पारंगत कराता है। महाभारत कथा में एक अन्य प्रसंग में महारथी भीष्म द्वारा तिरस्कृत राजकुमारी 'अंबा' अपने अपमान का प्रतिकार लेने के लिए कुरुक्षेत्र के महासंग्राम में नपुंसक शिखंडी के रूप में भीष्म के सम्मुख प्रकट होकर उनके मृत्यु का कारण बनती है। शिखंडी और वृहन्नला दोनों ही किन्नर के रूप में पुराणों में वर्णित हैं। स्त्री और पुरुष के अतिरिक्त मानव समाज में एक और लिंग व्यवस्था सदियों से चली आ रही है जिसे अन्य लिंगी मनुष्य कहा जाता है अर्थात् जो न स्त्री हैं और न पुरुष। जननांगों के अभाव, अविकसित या निष्क्रियता से उत्पन्न नपुंसकता से ग्रस्त मनुष्यों को हिजड़ा कहा जाता है। प्रकारांतर से इनके लिए एक सम्मानजनक शब्द 'किन्नर' गढ़ लिया गया। 'किन्नर' शब्द का संबंध हिमाचल प्रदेश के 'किन्नौर' जिले से कदापि नहीं है। हिजड़ों के लिए इस शब्द के प्रयोग पर 'किन्नौर' प्रदेश के लोगों ने आपत्ति की थी। किन्नरों के लिए अंग्रेजी का 'थर्ड जेंडर' शब्द बहुप्रचलित है अर्थात् तृतीय लिंगी मनुष्य।

किन्नर चाहे किसी भी धर्म का हो, इस समुदाय में शामिल होते ही वह अपने पूर्व धर्म और जाति को छोड़ देता है। इनकी आरध्या देवी 'बहुचरा माता' (बुचरा) कहलाती है। वह इसी देवी की पूजा करते हैं। एक किंवदंती के अनुसार बुचरा माता की तीन अन्य बहनें दृ नीलिमा, मानसा और हंसा थीं। सबसे बड़ी बुचरा हिजड़ा बन गई तो बची बहनों को भी उन्होंने अपने जैसा बना दिया। इनकी संतानें नहीं थीं तो इन्होंने लड़कों को गोद ले लिया। लेकिन बुचरा माता के मंदिर में निस्संतान दंपति संतान माँगने के लिए जाते हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में किन्नरों के लगभग 500 धाम हैं जहाँ उनके नायक या गुरु निवास करते हैं।

बुचरा और उनकी तीन बहनों के आधार पर इनकी चार शाखायें हैं – बुचरा, नीलिमा, मानसा और हंसा। बुचरा की शाखा में पैदाइशी, नीलिमा की शाखा में जबरन बनाए गए, मानसा शाखा में इच्छा से बने और हंसा में उन्हें जगह दी जाती है जो शारीरिक कमी के कारण किन्नर बनते हैं। एक अन्य विभाजन के अंतर्गत नीलिमा शाखा के किन्नर गाने और ढफली बजाने का काम करते हैं तो मानसा शाखा का काम बनने वाले व्यक्ति के लिए सामान इकट्ठा करना है। जब बुचरा किसी को किन्नर बना रहे होते हैं तब हंसा के जिम्मे साफ-सफाई का काम आता है। साथ ही कब्र खोदने और उसमें राख डालने का काम भी केवल हंसा शाखा के किन्नर ही करते हैं, शवों पर पहली मिट्टी डालने का काम बुचरा शाखा के लोग ही करते हैं। किन्नरों की भी एक पारिवारिक व्यवस्था होती है। यह व्यवस्था सामान्यजनों के परिवारों की तरह ही होती है। हर घर या घराने का एक मुखिया होता है। जिसे नायक कहते हैं। नायक के नीचे गुरु होते हैं फिर चले। गुरु का दर्जा माता-पिता से कम नहीं होता। हर किन्नर को अपने गुरु को अपनी कमाई का एक निश्चित हिस्सा देना होता है। गुरु के नीचे काम करने वाले सभी चले घराने की बहुएँ कहलाती हैं। घराने के अंदर भाई, बहन, बुआ, चाची, दादा, दादी आदि का अपना स्थान होता है। जो किन्नर पुरुष प्रवृत्ति का होता है उसे भाई कहा जाता है। ऐसे ही महिला प्रवृत्ति के किन्नरों को बहन का ओहदा दिया जाता है।

भारतीय समाज में जननांगों से अपंग शिशुओं को मातापिता द्वारा त्याग दिया जाता है। जननेन्द्रियों से अपंग या जननांग विहीन शिशु के जन्म की खबर मिलते ही किन्नर समुदाय उस परिवार से शिशु को माँगकर या बलपूर्वक प्राप्त कर अपने समुदाय में पालन-पोषण करने के लिए लेकर चले जाते हैं। वह शिशु किन्नर प्रथा एवं परंपरा के अनुसार ही स्वयं को पुरुष या स्त्री के रूप में ढालकर विसंगतिपूर्ण जीवन जीने के लिए अभिशप्त हो जाता है। दुनिया के हर देश और समाज में किन्नर समुदाय अनेक उपजातियों में बँटा हुआ है। प्रत्येक उपजाति अथवा उपसमुदाय अपने ढंग से जीवनयापन करता है। इनकी अपनी वेशभूषा, खान-पान और रहन-सहन की संस्कृति होती है जिसका पालन उस समूह के सदस्यों को करना होता है। इन समुदायों के उपसमूहों के नेतृत्व के लिए इनमें आपसी स्पर्धा भी होती है। भारत के महानगरों में किन्नर समुदायों के टोले जगह-जगह दिखाई दे जाते हैं। अक्सर यह लोग चौराहों पर वाहन यात्रियों से पैसे माँगते हुए दिखाई देते हैं। इनके समुदाय शिशु जन्म के अवसर पर लोगों के घरों में बधाई गीत गाकर नवजात को आशीर्वाद देते हैं। इस समुदाय का आशीर्वाद नवजात के लिए कल्याणकारी माना जाता है। बदले में उन्हें कुछ धन की प्राप्ति हो जाती है। अधिकतर किन्नर समुदाय के लोग जिन्हें भिन्न लिंगी मान लिया गया है, इनके लिए 'इतर लिंगी' शब्द का प्रयोग होता है। शासकीय प्रयोजनों के लिए किन्नर समुदाय के लोगों के लिए 'अन्य लिंगी' नामक श्रेणी निर्मित कर दी गयी है। किन्नरों में शिक्षा का नितांत अभाव होता है। अपवाद स्वरूप यत्रतत्र भारत में शिक्षित व्यक्ति (अन्य लिंगी) दिखाई दे जाते हैं जिनकी संख्या नगण्य है।

लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी नामक किन्नर जो शिक्षित विदुषी व्यक्ति के रूप में जानी जाती है। इन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान के साथ संगीत और नृत्य शास्त्र का भी अध्ययन किया है। किन्नर समुदाय के अधिकारों के लिए इन्होंने एक सशक्त आंदोलनकारी के रूप में ख्याति अर्जित की है। उज्जैन महाकुंभ सिंहस्थ 2016 में उन्हें महामंडलेश्वर की पदवी प्रदान की गई थी। इनके द्वारा रचित आत्मकथा 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी' हिन्दी किन्नर साहित्य में बहुचर्चित कृति है। नई सदी में कुछ किन्नरों ने अपने कठिन संघर्ष से राजनीति में प्रवेश कर आम चुनाव में बहुमत से विजय प्राप्त कर विधायक और महापौर तक के पद सँभाले जिनमें प्रमुख हैं – शबनम मौसी, कमला जान, कमला किन्नर और मधु किन्नर आदि। देश की पहली किन्नर शिक्षाविद प्राचार्य मानोबी बंद्योपाध्याय (पश्चिम बंगाल) और पहली किन्नर वकील तमिलनाडु की सत्या श्रीशर्मा ने सिद्ध कर दिया कि किन्नर अथवा 'थर्ड जेंडर' किसी भी विद्वत स्त्री-पुरुष की भाँति बुद्धिजीवी वर्ग के समकक्ष अपनी प्रतिभा प्रदर्शित कर सकते हैं। अस्मिता की यह लड़ाई जो किन्नरों द्वारा लड़ी जा रही है, इन्हें 15 अप्रैल 2014 को विजय हासिल हुई जब सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति के एस राधाकृष्णन और न्यायमूर्ति ए के सीकरी ने थर्ड जेंडर को मान्यता देते हुए किन्नरों के हक में ऐतिहासिक फैसला दिया।

हिन्दी कथा साहित्य में विगत दो दशकों में प्रवृत्तिगत अनेक नए प्रयोग हुए हैं। कहानी और उपन्यास साहित्य में नए सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आयाम जुड़ते गए। दलित चेतना प्रखर रूप में कहानी और उपन्यास के माध्यम से अभिव्यक्त हुई जिसमें प्रतिरोध का स्वर बलवती दिखाई देता है। इसीके समकक्ष आदिवासी जनजीवन पर केन्द्रित कथा साहित्य विपुल मात्रा में रचा गया। अनेक उदीयमान लेखक उक्त समुदायों के उत्पीड़न भरे जीवन के सामाजिक पक्ष को प्रहारक मुद्रा में व्यक्त करते हुए दिखाई देते हैं। दलित चेतनाप्रधान कथा साहित्य में दलित स्त्रियों की अंतरगाथाओं ने अपनी अलग भावभूमि निर्मित की है। आदिवासी कथा साहित्य में वन्य प्रान्तों में बसे जनजातियों से विकास के नाम पर उनकी वन्य भूमि को उनसे छीनने तथा उनके विस्थापन के कारण उत्पन्न दुष्परिणामों की करुण गाथा भारत के वंचित तथा हाशिये पर धकेले गए समाज का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करता है। हाशिये पर के जन समुदायों में किन्नर समुदाय का असंगठित बिखराव भरे जीवन को वर्तमान कथाकारों ने अपनी रचनाओं में चित्रित कर एक नई भावभूमि को आविष्कृत किया है। वर्तमान समय में किन्नर जनजीवन की चुनौतियाँ साहित्य के केंद्र में स्थान पाकर शिष्ट समाज का ध्यान आकर्षित कर रही हैं। किन्नर कथा साहित्य के उदय से आम लोगों में किन्नरों के प्रति घृणा और अलगाव के व्यवहार में परिवर्तन हुआ है। किन्नर व्यक्तियों के प्रति समाज धीरे-धीरे संवेदनशील हो रहा है। किन्नरों के पक्ष में अनेक गैरसरकारी संगठन और सामाजिक कार्यकर्ता आवाज उठा रहे हैं इसके बावजूद वे उपहास और तिरस्कार के पात्र बने हुए हैं, यह मानवता की दृष्टि से चिंता का विषय है। हिन्दी कथा साहित्य में कुछ चुनिन्दा लेखकों ने भारत के विभिन्न महानगरों में छोटे छोटे कुनबों में बसे विभिन्न किन्नर समुदायों के जीवन को वास्तविकता के धरातल पर चित्रित करने का प्रयास किया है।

मानव सभ्यता के विकास यात्रा में अनेक पड़ाव आते रहे हैं। भूमंडलीकरण की स्थितियों से प्रभावित और परिवर्तित सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश ने हाशिये पर पड़े किन्नर समुदाय के प्रति समाज में मानवीय संवेदनाओं को जगाया है। समाज में परिवर्तन की इस लहर से समाज में उपेक्षित वर्गों को पहचान मिली और निस्संदेह हिन्दी के कुछ चुनिन्दा कथाकारों ने इस आंदोलन को साहित्य की मुख्य धारा में स्थान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिन्दी में किन्नर जीवन पर आधारित कथा साहित्य का आरंभ 21 वीं शती में हुआ। विगत शती में स्त्री, दलित और आदिवासी वर्ग को तो विशेष अभिव्यक्ति मिली परंतु किन्नर समाज को हिन्दी साहित्य में कोई विशेष अभिव्यक्ति नहीं मिली।

हिंदी में किन्नर समुदाय पर केन्द्रित – यमदीप, 2002 (नीरजा माधव), मैं भी औरत हूँ, 2005 (अनुसूइया त्यागी), किन्नर कथा, 2010 (महेंद्र भीष्म), तीसरी ताली, 2010 (प्रदीप सौरभ), गुलाम मंडी, 2013 (निर्मला भुराड़िया), पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा, 2016 (चित्रा मुद्गल) तथा मैं पायल, 2016 (महेंद्र भीष्म), पंखवाली नाव (पंकज बिष्ट) उपन्यास प्रकाश में आए हैं। ट्रांसजेंडर स्त्री मानोबी बंधोपाध्याय की बांग्ला से हिंदी में अनूदित आत्मकथा 'पुरुष तन में फंसा मेरा नारी मन'— 2018 किन्नर साहित्य में रचित एक मात्र आत्मकथा है। बांग्ला में रचित यह बहुचर्चित आत्मकथा हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी उपलब्ध है।

किन्नर जीवन से संबंधित कहानियों का संग्रह 'थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ' संग्रह में अठारह कहानियाँ संगृहीत हैं जिनके लेखक क्रमशः शिवप्रसाद सिंह, राही मासूम रजा, सलाम बिन राजाक, एस आर हरनोट, कुसुम अंसल, किरण सिंह, कादंबरी मेहरा, डॉ. पद्मा शर्मा, अंजना वर्मा, महेंद्र भीष्म (त्रासदी), ललित शर्मा (रतियावान की चेली), डॉ. लवलेश दत्त (नेग), गरिमा संजय दुबे (पन्ना बा), श्रीकृष्ण सैनी (हिजड़ा), विजेंद्र प्रताप सिंह (संकल्प), चाँद दीपिका (खुश रहो क्लीनिक), पूनम पाठक (किन्नर) और पारस दासोत (गलती जो माफ नहीं) हैं। किन्नर जीवन पर मछिन्द्र मोरे द्वारा रचित नाटक 'जाने मन' बहुत बारीकी से इस समाज की समस्याओं को प्रस्तुत करता है।

उपर्युक्त उपन्यासों में किन्नर जनजीवन में व्याप्त शोषण, उपेक्षा, तिरस्कार, घृणा, संघर्ष, जिजीविषा को पूरे सामर्थ्य के साथ प्रस्तुत किया है। उक्त कथाकारों ने मुंबई और दिल्ली महानगरों की किन्नर गंदी बस्तियों में नारकीय जीवन जीने के लिए अभिशप्त किन्नर लोगों की संवेदनाओं, अपेक्षा और आकांक्षाओं का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है। जिस तरह किन्नरों में स्वयं को पुरुष या स्त्री का वेश धारण करने की स्वैच्छिक परंपरा विद्यमान है, इनमें जननेन्द्रिय दोष होने के बावजूद विवाह की परंपरा और पति-पत्नी के रूप में जीवन यापन की स्थितियों का चित्रण, किन्नर समाज के समाजशास्त्रीय स्वरूप को पहचानने में सहायक होता है। किन्नरों के यौन शोषण के प्रसंग किन्नर कथा साहित्य में बहुतायत से पाये जाते हैं। राजनेताओं से संबंध रखने वाले प्रभावशाली किन्नर नेताओं के जीवन की कथाएँ भी इस साहित्य में दिखाई देती हैं। राजनैतिक प्रयोजनों के लिए भी किन्नर समुदायों को प्रलोभन के मार्ग से शोषित क्या जाता है और कुछ परिस्थितियों में ये राजनीतिक हत्या के भी शिकार हो जाते हैं। प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली' उपन्यास एक किन्नर समुदाय में गद्दी अर्थात् शीर्ष नायकत्व को हासिल करने के लिए चलाने वाले षडयंत्र और परस्पर संघर्ष को दर्शाता है। आकर्षक किन्नर अक्सर तथाकथित संभ्रांत वर्ग के विकृत यौनाचार के शिकार हो जाते हैं, ऐसी घटनाओं को किन्नर कथा साहित्य में प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया गया है। जहाँ एक ओर प्रदीप सौरभ किन्नरों के सशक्तिकरण के लिए आवाज उठाते हैं वहीं दूसरी ओर महेंद्र भीष्म किन्नरों के मानवाधिकारों के लिए पक्षधर बनकर खड़े होते हैं। किन्नर जन्म लेने वाला व्यक्ति बार-बार सवाल करता है कि उसके जन्म के लिए उसका तो कोई दोष नहीं किन्तु समाज उसे इसका दंड क्यों देता है? यह महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसका सामाधान कोई सभ्य समाज देने में समर्थ नहीं दिखाई देता। समाज में किन्नरों की स्वीकार्यता महत्वपूर्ण मुद्दा है। भारतीय समाज में एक विचित्र दोहरापन मौजूद है जो सदियों से लिंग के आधार पर सामाजिक अधिकार तय करता है। स्त्रीलिंग और पुल्लिंग इन दोनों को सामाजिक सामाजिक संरचना का आधार माना गया है। ये दोनों मिलकर ही जीवन का सृजन करते हैं जिससे जीवन की शृंखला पीढ़ियों का निर्माण करती है। जननेन्द्रिय के बिना मनुष्य की प्रजनन शक्ति का ह्रास सुनिश्चित है। संतानोत्पत्ति स्त्री-पुरुष के वैवाहिक जीवन का महत्वपूर्ण सामाजिक प्रदेय है। लिंगविहीन या नपुंसक मनुष्य इस अधिकार से वंचित हो जाता है जिससे समाज में इस श्रेणी के मनुष्यों को असामाजिक और अवांछित माना जाता है। इस समुदाय के प्रति सभ्य समाज की यह मानसिकता मानवोचित नहीं है। किन्नर जीवन को जीने के लिए अभिशप्त समुदाय के प्रति मानवीय संवेदना को जागृत करने का गुरुतर दायित्व साहित्यकार और सामाजिक आंदोलनकारियों ने स्वीकार किया।

किन्नर को जीवन के प्रारम्भ से लेकर अंत तक अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उसकी सबसे बड़ी चुनौती उसकी देह होती है। दैहिक बनावट और अंतःकरण की भावनाओं में सामंजस्य न होने के कारण वे मानसिक वेदना तो सहते ही हैं, साथ ही कई बार उनकी देह शोषण का शिकार भी हो जाती है। लोगों के घरों में मंगल अवसरों पर अपनी वेदना को छिपाकर हर्षित होने वाले किन्नरों की देह लोगों में प्रायः आकर्षण का केंद्र बनी रहती है। इसीलिए कुछ कुंठित मानसिकता के लोग उनका दैहिक शोषण करते हैं। किन्नर समाज की यह एक यथार्थ स्थिति है जिसे हिंदी उपन्यासों में मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। नई सदी का हिंदी कथा साहित्य किन्नर समुदाय की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अस्मिता की पड़ताल करने में कमोबेश सफल हुआ है।

किन्नर समाज का वह वर्ग है जो शारीरिक रूप या यौनिक अंगों के विशेष संदर्भ में अपूर्ण माना जाता है। किन्नर की बाह्य देह का उसके अंतःकरण के भावों से तालमेल नहीं होता अर्थात् पुरुष देह में स्त्रियोचित गुण होते हैं या स्त्री की देह में पुरुष देह जैसी मांसलता होती है। वास्तव में यह एक जैविक अनिश्चितता के कारण होता है। इसी जैविक अनिश्चितता के कारण तह वर्ग समाज के अन्य वर्गों की भाँति सामान्य प्रतीत नहीं होता। इस संबंध में समाज में भी अनेक प्रकार के भ्रम व्याप्त हैं जिस कारण किन्नरों का जीवन सामान्य मनुष्यों के जीवन से सर्वथा भिन्न दिखाई देता है। किन्नर अपने जीवन काल में अनेक विसंगतियों का सामना करता है। इन विसंगतियों को साहित्य के माध्यम से समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने का चुनौतीपूर्ण अभियान हिंदी के कतिपय कथाकारों ने श्रमसाध्य ढंग से किया। इन सभी लेखकों ने किन्नर जीवन की वास्तविकताओं को समझने के लिए विभिन्न शहरों में बसे विभिन्न किन्नर समुदायों के बीच जाकर समाजशास्त्रीय अनुसंधान किया। इन लेखकों के द्वारा किन्नरों के विभिन्न वर्गों, उनके सामाजिक जीवन, रीतिरिवाज, परम्पराएँ, रूढ़ियाँ, धार्मिक मान्यताएँ, उनकी आजीविका के स्रोत और उनके कामकाज आदि का विस्तृत अध्ययन किया गया।

हिंदी में रचित किन्नर जीवनप्रधान उपन्यासों में लेखकों के द्वारा किए गए सर्वेक्षण और अध्ययन के आधार पर ही कथानकों को बुना गया और पात्रों का चयन किया गया। इन उपन्यासों के सभी किन्नर पात्र पुरुष और स्त्री वेश में भिन्न-भिन्न सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में अपने अभिशप्त जीवन की विडम्बना को भोगते हुए प्रतीत होते हैं। विभिन्न परिवेशों में किन्नर पात्रों के जीवन की कथाओं को लेखकों ने किन्नरों की भाषाई चेतना के संग, उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा रूपों में ही प्रस्तुत किया है। इन उपन्यासों में किन्नरों की विशिष्ट भाषाई चेतना स्पष्ट दिखाई देती है। समाज की रूढ़ मानसिकता के कारण किन्नरों की छवि ऐसी बन चुकी है कि माता-पिता भी जननांग की विकलांगता के साथ जन्मी अपनी ही संतान को त्याग देते हैं। इस तरह जीवन के प्रथम पड़ाव पर ही नपुंसक शिशु को इस चुनौती का सामना करना पड़ता है। इस सामाजिक कुरीति का कोई समाधान दिखाई नहीं देता। ऐसी संतान को त्याग देने की मानसिकता समाज के सामान्य से लेकर उच्चवर्ग, राजा-महाराजा हर वर्ग में व्याप्त है। 'किन्नर कथा' उपन्यास के आलोक में इस तथ्य को स्पष्ट किया जा सकता है। इस उपन्यास में जैतपुर के राजा जगतराज सिंह के घर कन्या (किन्नर) का जन्म होता है, परंतु वह अपनी लोकमर्यादा की रक्षा के लिए अपनी नवजात कन्या को मरवा देने का हुक्म दे देता है। किन्तु उनका दीवान पंचम सिंह उस शिशु के प्राण नहीं ले पाता है। वह शिशु एक किन्नर के हाथों सौंपी दी जाती है। 'किन्नर गुरु' तारा उस कन्या का पालन पोषण करती है। राजा जगतराज सिंह को लोकलाज ज्यादा प्रिय थी। समाज में यही मानसिकता विद्यमान है जिसका चित्रण सभी उपन्यासों में एक समान दिखाई देता है। पैदा होते ही किन्नर शिशु को अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ती है। कभी-कभी संयोग से यदि किन्नर के रूप में जन्मे शिशु के प्राण बच जाएँ तो भी उसे अपने परिवार के साथ जीवन बिताने का सुख प्राप्त नहीं होता

क्योंकि उसे जन्म के बाद किन्नर समुदाय के सुपुर्द कर दिया जाता है या किन्नर समुदाय जबरन उसे अपने समुदाय में शामिल करने के लिए लेकर चले जाते हैं।

चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा' के नायक विनोद की स्थिति ऐसी ही है। उसकी माँ उसके किन्नर होने के बावजूद उसे अपनी अन्य संतानों की भाँति ही प्रेम करती है, परंतु पिता के लिए वह चिंता का विषय बन जाता है। विनोद का भाई भी उससे घृणा करता है। उसकी माँ के सिवा उसे कोई अपने समाज में नहीं रहने देना चाहता। इसलिए वे निर्दयतापूर्वक विनोद को किन्नरों को सौंप देते हैं। विनोद की इस वेदना को समूचे उपन्यास में विनोद के द्वारा उसकी माँ को क्रमशः लिखे जाने वाले पत्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। पत्रों के माध्यम से वह अपनी मानसिकता और अपनी उलझनें व्यक्त करता है। वह अपने अधिकारों की लड़ाई अकेले लड़ता है। वह मानो समस्त किन्नर समुदाय के लिए मानवाधिकार की माँग करता है। किन्नरों को भी उनकी इच्छानुसार पुल्लिंग या स्त्रीलिंग श्रेणी में शामिल करने की माँग करता है।

किन्नर जीवन पर रचित उपन्यासों में 'नाला सोपारा' का स्थान महत्वपूर्ण है। आत्मकथात्मक शैली में रचित यह उपन्यास किन्नर युवक की शारीरिक और मानसिक वेदना को व्यक्त करता है। किन्नर समुदायों के माध्यम से राजनेता अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। उपन्यास के अंत में विनोद ऐसी ही राजनीतिक हत्या का शिकार होकर अपनी जान गँवा देता है। उपन्यास में पूनम जोशी नामक किन्नर के साथ हुए बलात्कार के प्रसंग से यह तथ्य उजागर होता है कि किन्नरों की देह कुंठित और विकृत यौन शोषण के अभ्यस्त लोगों के लिए अचंभा पैदा करती है और दिल बहलाने का सस्ता साधन बन जाते हैं। बेबसी और लाचारी में किन्नर प्रतिरोध नहीं कर पाते और अंत में मौत का शिकार हो जाते हैं। चित्रा मुद्गल के उपन्यास के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि यौनिक अपूर्णता के बावजूद किन्नरों को शारीरिक यौनाचार का शिकार होना पड़ता है। अतः उनको समाज कि दोहरी मार झेलनी पड़ती है। पहला, अपूर्ण देह के साथ जीवनयापन करना पड़ता है और दूसरा बलात्कार का दंश भी सहना पड़ता है। शारीरिक विपन्नता की विडंबनाओं के अतिरिक्त एक अन्य चुनौती आर्थिक विपन्नता के रूप में किन्नर समुदाय को झेलनी पड़ती है। किन्नर समुदाय लोगों के मंगलपूर्वी और उत्सवों पर नाच गाकर, तालियाँ पीटकर अपना जीविकोपार्जन करते हैं। भारत में सरकारी नीतियाँ भी उनके अनुकूल नहीं हैं। सरकारी नौकरी प्राप्त करने का कोई प्रावधान नहीं है। इसलिए वह प्रायः असहाय अवस्था में सड़कों पर, रेलगाड़ियों में तालियाँ पीटकर माँगते हुए दिखाई देते हैं। 'नाला सोपारा' का मुख्य पात्र विनोद उर्फ बिन्नी किन्नर समुदाय में रहते हुए पढ़ाई पूरी करने के लिए गाड़ियाँ साफ करने का काम करता है। इस प्रकार की जागरूकता किन्नर समुदायों में नहीं के बराबर है क्योंकि समाज उन्हें मुख्य धारा में शामिल होने नहीं देता। किन्नर समुदाय में शिक्षा का अभाव होता है। उन्हें शिक्षा का अवसर मुहैया नहीं कराया जाता। इसके लिए आवश्यक है किन्नर समुदाय में चेतना का संचरण। यदि वे स्वयं चेतन हो जाएँगे तो वे स्वयं अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं।

प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली' उपन्यास की पात्र 'मणि' के साथ स्कूल में एक अप्रिय घटना घटती है जो उसके जीवन को बदलकर रख देती है। एक दिन स्कूल में कुछ बदमाश लड़के उसे नंगा कर उसके गुप्तांगों को देखकर हिजड़ा, हिजड़ा! चिल्लाने लगते हैं। इस अपमान जनित व्यवहार से प्रताड़ित होकर मणि स्कूल छोड़ने के लिए विवश हो जाती है। इसी तरह के प्रसंग का चित्रण 'गुलाम मंडी' (निर्मला भुराडिया) में हुआ है। छात्र का लिंग पहचानने के लिए उसकी चड्डी उतरवाई जाती है और फिर उसे जूतों से मारकर स्कूल से निष्कासित किया जाता है। इस तरह इस वर्ग को सभी क्षेत्रों में हेय दृष्टि से देखा जाता है। आर्थिक क्षेत्र भी इस दृष्टि से अपवाद नहीं है। आर्थिक क्षेत्र में इस वर्ग के जुड़े व्यक्ति का कार्यरत होना असंभव बना दिया गया है। इस वर्ग को लेकर परिवार और समाज के मध्य मौजूद द्वंद्व को लेखकों द्वारा स्पष्ट करने के प्रयास हुए हैं। नीरजा माधव ने 'यमदीप' में इस द्वंद्व को पूरी संवेदना से उभारा है। 'नाज

बीबी' नामक बालिका को उसके हिजड़ा होने के सच जब नहीं छिपाया जा सकता, तब उसके माता-पिता को उसे महताब गुरु नामक एक किन्नर समुदाय के मुखिया को असहाय स्थिति में सौंप देना पड़ता है। इसके अतिरिक्त उनके पास कोई दूसरा विकल्प नहीं था। महताब गुरु के अनुसार उस बालिका के माता-पिता उस बस्ती में रह नहीं सकते थे और अपनी बेटी को अपने साथ नहीं रख सकते थे और अपने को हिजड़ी के बाप कहलाने के अपमान के साथ नहीं जीवित बिता सकते थे। इसीलिए इसे किन्नरों को दे देने के सिवाय उनके पास और कोई रास्ता न था।

महेंद्र भीष्म द्वारा किन्नर जीवन पर रचित दूसरा उपन्यास है '**मैं पायल**'। आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत यह उपन्यास लखनऊ की किन्नर गुरु पायल सिंह के जीवन संघर्ष पर आधारित है। 'मैं पायल' उपन्यास में देह व्यापार के दो पक्षों को चित्रित किया गया है। प्रथम 'अनवर' नामक पात्र की माँ का देह व्यापार में संलिप्त होना तथा दूसरा हिजड़ों का देह व्यापार में शामिल हो जाना, दोनों समूहों की देह व्यापार में संलिप्तता का मूल कारण गरीबी है।

थर्ड जेंडर अन्य लिंगी अर्थात् किन्नर समुदाय के अतिरिक्त एक और वर्ग है जिसे ट्रांसजेंडर या लिंग परिवर्तित मनुष्यों का है। वह किन्नर जिसमें पुरुष या स्त्रियोजित प्रवृत्तियाँ हावी होती जाती हैं और वह तदनुरूप से ही व्यवहार करता है। ऐसी स्थिति में किन्नर स्वेच्छा से पुरुष या स्त्री के रूप में अपना शारीरिक रूपान्तरण कर सकता है। नव्यतम कॉस्मेटिक सर्जरी व लिंग परिवर्तन के लिए समुचित शल्य प्रक्रिया उपलब्ध होने के कारण अब यह संभव हो गया है। इस प्रक्रिया के द्वारा पुरुष और स्त्री अपना लिंग परिवर्तन कर सकती हैं। इस संदर्भ में उच्चमध्य वर्गीय परिवार में बेटे के रूप में जन्मा 'सोमनाथ' धीरे-धीरे अपने भीतर विकसित स्त्रैण प्रवृत्तियों का आभास करता है। उसका लड़कों के प्रति आकर्षण उसके अस्वाभाविक व्यावहार के प्रति माता-पिता और अन्य लोगों का ध्यान आकर्षित करता है। यही सोमनाथ अंत में मानोबी बंधोपाध्याय के नाम से सुंदर युवती के रूप में परिवर्तित हो जाती है क्योंकि उसमें नारी मन बसता था। स्त्री में स्वयं को बदलने और स्थापित करने के लिए सोमनाथ उर्फ मानोबी को जिन यातनाओं और अपमान से भरे जीवन से संघर्ष करना पड़ा, इसे मानोबी ने स्वयं आत्मकथा में प्रस्तुत किया है।

मानोबी बंधोपाध्याय वह शख्सीयत है जिसने अपने कठिन संघर्ष के द्वारा पर दुनिया भर का तिरस्कार, हिकारत, अपमान, उपेक्षा और नफरत को झेलते हुए पारिवारिक समर्थन के बल पर उच्च शिक्षा पूरी की। बांग्ला साहित्य में एम ए , एम फिल और पीएच डी की उपाधियाँ प्राप्त कीं। और वह पश्चिम बंगाल में एक कॉलेज की भारत की प्रथम ट्रांसजेंडर प्रिंसिपल का कार्यभार कुशलतापूर्वक संभाल रहीं हैं। इस संघर्ष को उन्होंने अपनी आत्मकथा में पिरोया है जो रोचक और रोमांचक दोनों है। अपनी आत्मकथा '**पुरुष तन में फंसा मेरा नारी मन**' को पाठकों को समर्पित करते हुए वह लिखती हैं – "उन सबके नाम, जिन्होंने मुझे अपमानित किया और अवमानव कह कर जीवन के हाशिये पर धकेल दिया। उन्हीं के कारण मुझे लड़ने की ताकत मिली और मैं जीवन में आगे बढ़ पाई। आशा करती हूँ कि पुस्तक मुझ जैसों के लिए प्रेरणात्मक सिद्ध होगी और वे भी जीवन में सफल हो पाएँगे।" लिंग परिवर्तन की सर्जरी के बाद कानूनी तौर पर सोमनाथ ने अपना नाम बदल लिया। इस संदर्भ में वह लिखती हैं – "क्योंकि मुझे लगता था कि मेरी देह और आत्मा एक स्त्री की हो गई थी, तो मेरे नाम से भी वही झलकना चाहिए। सोमनाथ, भगवान शिव का एक नाम है, वे एक पुरुष थे और मैं अपने लिए आदर व सम्मान की इस तलाश में उनके नाम का अपमान नहीं करना चाहती थी। मैंने मानोबी नाम इसलिए चुना क्योंकि इसका अर्थ है सर्वोत्कृष्ट मादा वृ प्रकृति वृ जैसा प्रकृति ने उसे बनाया है। मैंने अपना नाम सोमनाथ से बदलकर मानोबी रखा और यह काम कोर्ट में मेजिस्ट्रेट के सामने किया गया। इसके बाद मैंने शीर्षस्थ अखबारों में अपना नाम और लिंग बदलने के बारे में सूचित किया। जब मुझे थीसिस के लिए अपना नाम बदलवाना था तो ये दस्तावेज बहुत काम आये। मैंने 2005 में पीएच डी का काम पूरा कर लिया पर डॉक्टरेट की डिग्री विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में 2006 में दी गयी।"

मानोबी बंदोपाध्याय का आत्मवक्तव्य गौरतलब है जो आत्मकथा के प्रारम्भ में प्रस्तुत किया गया है। " कितनी बार ऐसा हुआ है कि आपकी गाड़ी लाल बत्ती पर रुकी है और आपने कार की खिड़की के बाहर से, भीख माँगते हिजड़े को देख कर अपना मुँह मोड़ लिया है? क्या आपको बहुत घृणा महसूस हुई? क्या यह स्थिति उस अनुभूति से बदतर नहीं लगी जो आप गोद में बच्चा लिए किसी भिखारिन को भीख माँगते देख कर महसूस करते हैं? क्यों? मैं आपको बताती हूँ कि ऐसा क्यों है। आप हिजड़े से घृणा करते हैं क्योंकि आप उसके लिंग के साथ कोई पहचान नहीं जोड़ पाते। आप उसे एक विचित्र घृणित जीव, संभवतः एक अपराधी और निश्चित तौर पर एक अवमानव समझते हैं।

"मैं भी उनमें से एक हूँ। मुझे सारा जीवन लोगों के मुख से हिजड़ा, बृहन्नला, नपुंसक, खोजा, लौंडा जैसे शब्द सुनने पड़े हैं और मैंने जीवन के इतने वर्ष यह जानते हुए बिताए हैं कि एक जातिच्युत व परित्यक्त हूँ। क्या इससे मुझे पीड़ा का अनुभव हुआ? हुआ और इसने मुझे बुरी तरह से आहत किया है। परंतु चलन से बाहर हो चुके मुहावरे का प्रयोग करें तो कह सकते हैं कि समय बड़े-बड़े घाव भर देता है। मेरे मामले में इस कहावत ने थोड़ा सा अलग तरह से अपना प्रभाव दिखाया है। कष्ट तो अब भी है पर समय के साथ-साथ दर्द घट गया है। यह मेरे जीवन के एकांत क्षणों में मुझे आ घेरता है, जब मैं अपने अस्तित्व संबंधी यथार्थ से जूझ रही होती हूँ। मैं कौन हूँ और मैं एक पुरुष की देह में कैद स्त्री के रूप में क्यों जन्मी? मेरी नियति क्या है? मेरे इस रंग-बिरंगे बाहरी आवरण के नीचे, शर्मसार व चोटिल वैयक्तिकता छिपी है जो आजाद होने के लिए तरस रही है वृ अपनी शर्तों पर जीवन जीने की आजादी और जो मैं हूँ, उसी रूप में रहने की आजादी! मैं अपने लिए यही आजादी और स्वीकृति चाहती हूँ। मेरा बाहरी कठोर रूप तथा उदासीनता ऐसा कवच है जिसे मैंने अपनी संवेदनशीलता को जीवित रखने के लिए पहनना सीखा है। आज, अपने सौभाग्य के बल पर, मैंने ऐसी अद्भुत सफलता अर्जित कर ली है जो प्रायः मेरे जैसे लोगों के लिए नहीं होती। लेकिन यदि मेरा सफर कुछ और हुआ होता? मैं अपने आप से बारंबार कहती हूँ कि अब मेरे लिए समय आ गया है कि मैं इस ख्याति के बीच प्रसन्न रहूँ परंतु भीतर ही भीतर कोई चेतावनी देता है। मेरी अंतरात्मा मुझसे कहती है कि मुझे अपने आसपास जो शोहरत और उत्सव दिखाई देता है, वह सब 'माया' है और मुझे एक संन्यासी के वीतराग की तरह ही इस प्रशंसा को ग्रहण करना चाहिए।

"मीडिया का कहना है कि कोई ट्रांसजेंडर पहली बार कॉलेज के प्रिंसिपल पद पर नियुक्त हुई, जो अपने-आप में एक उल्लेखनीय कदम है। तब से मेरे फोन लगातार घनघनाते हैं, मेरी डेस्क पर अलग-अलग स्थानों पर होने वाले बधाई कार्यक्रमों के न्यौतों के अंबार लगे रहते हैं। मुझे यह मान कर बहुत खुशी होती है कि जो लोग मेरा अभिनंदन करते हैं, उन्होंने मुझे उसी रूप में स्वीकार किया है, जो मैं हूँ, परंतु मैं उन खी-खी करते सुरों, तिरस्कार और दबी हँसी को कैसे अनसुना कर सकती हूँ, जो छिपाने की कोशिश करने पर भी नहीं छिपती? उनके लिए मैं एक 'तमाशा' भर हूँ और बिना पैसों का कोई तमाशा देखने को मिल रहा हो तो कौन नहीं देखना चाहेगा?

"मानसिक आघात और क्रोध, दो ऐसे भाव हैं जिन्हें मैंने दबाना और नजर अंदाज करना सीखा है। ये मेरे मानसिक कवच का हिस्सा हैं, जिनसे मैं अपने आप को महफूज रख पाती हूँ। मैंने अंततः इस तथ्य को स्वीकार कर लिया है कि मेरी उपलब्धियों का मेरे आस-पास के लोगों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उन्हें अब भी लगता है कि आज मैं भी नपुंसक हूँ और यही मेरी असली पहचान है। मुझे भावुक होने का अधिकार भी है, यह विचार अधिकतर लोगों को अनचीन्हा लगता है। मैं उन्हें दोष नहीं देती। मैं स्वयं को दोषी मानती हूँ कि मैंने ऐसी पीड़ा को नजरअंदाज क्यों नहीं किया। मुझे तो बहुत पहले उनकी परवाह करनी छोड़ देनी चाहिए थी।

“ऐसा नहीं जीवन कि जीवन के इक्यावन वर्षों के दौरान, मुझे कभी अपने हिस्से का प्यार नहीं मिला। कई बार मेरा दिल भी टूटा, पर हर बार मुझे एक नया सबक सीखने का अवसर मिलता। मैंने बहुत अच्छी तरह और गहराई से प्यार किया और आशा करती हूँ कि मेरे साथी जहाँ भी हैं, वे चुपचाप मेरे उस रूप को याद करते होंगे। यह और बात है कि संबंध कभी मेरे लिए कारगर नहीं हो सके। जिन्होंने मुझे प्रेम किया, वे सदा मुझे छोड़ कर चले गए और हर बार जैसे मेरा कुछ हिस्सा भी, उनके संग कहीं खो गया।

“आज अपनी कहानी लिखने बैठी हूँ तो जैसे यादों का रेला उमड़ आया है। मैंने इस विश्वास के साथ यह सब लिखा है कि इस तरह समाज, हम जैसे लोगों को बेहतर तरीके से समझ सकेगा। हम बाहरी तौर पर दिखने में भले ही थोड़े अलग लगे, पर आपकी तरह ही इंसान हैं और आप सबकी तरह ही शारीरिक और भावात्मक जरूरतें रखते हैं।”

हिंदी सिनेमा में भी किन्नरों के जीवन और उनकी समस्याओं को सफलतापूर्वक चित्रित किया गया। प्रारम्भ में फिल्मों में हिजड़ा पात्र हास्य का विषय रहे किन्तु अब इसमें बदलाव आ गया है। किन्नर जीवन पर गंभीर सामाजिक सरोकार की फिल्में बनने लगी हैं। इस दृष्टि से ‘वेलकम टु सज्जनपुर’ (श्याम बेनेगल) ‘सड़क’ (महेश भट्ट), ‘संघर्ष’ (तनूजा चंद्रा), ‘तमन्ना’ (महेश भट्ट), ‘मस्तकलंदर’ (राहुल रवेल), ‘फायर’ (दीपा मेहता) आदि महत्वपूर्ण हैं। किन्नर जीवन और उससे जुड़ी समस्याओं पर साहित्य में विमर्श प्रारम्भ हो चुका है। भविष्य में जब इस समुदाय द्वारा मानव अधिकारों की लड़ाई व्यापक स्तर पर लड़ी जाएगी तो जागरूक समाज उनके साथ उनके पक्ष में खड़ा होगा। इस अभिशप्त समुदाय को बिना लिंग भेद के सामाजिक स्वीकार्यता प्राप्त होगी। इस दिशा में हिंदी कथाकारों ने स्तुत्य प्रयास कए हैं।

सन्दर्भ :-

1. नीरजा माधव : यमदीप, 2002.
2. अनुसूइया त्यागी : मैं भी औरत हूँ, 2005.
3. महेंद्र भीष्म : किन्नर कथा, 2010.
4. प्रदीप सौरभ : तीसरी ताली, 2010.
5. निर्मला भुराड़िया : गुलाम मंडी, 2013.
6. चित्रा मुद्गल : पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा , 2016.
7. महेंद्र भीष्म : मैं पायल, 2016.